IJARETY

International Journal of Advanced Research in Education and TechnologY (IJARETY)

Volume 11, Issue 1, January 2024

Impact Factor: 7.394

www.ijarety.in editor.ijarety@gmail.com

International Journal of Advanced Research in Education and TechnologY(IJARETY)

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 7.394| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January-February 2024 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2024.1101045

मानवतावादी चिन्तन के रूप में महिला मानवाधिकार : दशा एवं दिशा

Dr. Dayachand

Assistant professor, Department of Political Science, Babu shobha Ram Govt. Arts College, Alwar (Rajasthan), India

शोध सार: महिला मानवाधिकार मानवाधिकारों का अभिन्न हिस्सा हैं, जिनका उद्देश्य महिलाओं को समानता, सम्मान एवं स्वतंत्रता के साथ जीवन जीने की गारंटी प्रदान करना है। ऐतिहासिक रूप से महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में भेदभाव का सामना करना पड़ा है, जिसके परिणामस्वरूप वैश्विक एवं राष्ट्रीय स्तर पर महिला अधिकारों के संरक्षण हेतु अनेक कानूनों, नीतियों एवं अंतर्राष्ट्रीय समझौतों को अपनाया गया। भारत में संविधान के भाग-III के मूल अधिकार, अनुच्छेद 14, 15, 16, 21 तथा 39 को महिलाओं की सुरक्षा एवं समानता के सुदृढ़ आधार के रूप में मान्यता प्राप्त है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना, दहेज निषेध अधिनियम, घरेलू हिंसा अधिनियम, कार्यस्थल पर लैंगिक उत्पीड़न निषेध अधिनियम आदि के माध्यम से महिलाओं की गरिमा और अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित की गई है। हालांकि शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, निर्णय-निर्माण और लैंगिक समानता के क्षेत्रों में आज भी चुनौतियाँ विद्यमान हैं। इस शोध से यह स्पष्ट होता है कि महिला मानवाधिकारों की पूर्ण उपलब्धि के लिए कानूनी संरक्षण के साथ-साथ सामाजिक जागरूकता, मानसिकता में परिवर्तन, महिला सशक्तिकरण तथा समान अवसरों का विस्तार अनिवार्य है। महिलाओं की सुरक्षा एवं सम्मान सुनिश्चित होते ही समाज में वास्तविक लोकतांत्रिक और मानवीय मूल्यों की स्थापना संभव हो सकेगी।

मूल शब्द : महिला मानवाधिकार, लैंगिक समानता, सशक्तिकरण, न्याय, सुरक्षा, संविधान, भेदभाव उन्मूलन, शिक्षा, गरिमा, सामाजिक परिवर्तन

I. प्रस्तावना

महिला मानवाधिकार मानवतावादी चिन्तन की केन्द्रीय अवधारणा एवं मानव समाज की प्रमुख माँग है। सैद्धान्तिक स्तर पर यह एक नवीन अवधारणा है, तथा 1945 ई. में संयुक्त राष्ट्र संघ के गठन के साथ ही इसके विस्तृत अध्ययन पर बल दिया जाने लगा। यद्यपि चिन्तन के स्तर पर यह एक नवीन अवधारणा है, फिर भी मानव सभ्यता के विकास के प्रत्येक चरण में इसके प्रभाव को खोजा जा सकता है। "मानव-सभ्यता के विकास का मूल- आधार 'मानवाधिकार' ही रहा है।" यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा, क्योंकि 'जीवन के अधिकार' की सुरक्षा के प्रति चेतना से प्रेरित होकर ही मानव वर्थर अवस्था से सभ्य समाज की दिशा में प्रवृत्त हुआ। इस तरह मानवाधिकार कोई नवीन विचार नहीं बल्कि मानव सभ्यता के विकास से सम्बन्धित विचार है 'आत्मरक्षा' या 'जीवन-रक्षा' के लिए समूह - समुदाय में संगठित होने की प्रेरणा में ही 'मानवाधिकार' का विचार निहित है। इस आधार पर मानवाधिकार' मानव चेतना से सम्बन्धित अवधारणा है मानव चेतना के विकास के साथ-साथ मानव अधिकारों का विचारक्षेत्र विस्तृत होता गया।

मानवाधिकार का प्रश्न सम्पूर्ण मानवता के बुनियादी सरोकारों से सम्बद्ध है तथा महिला अधिकारों के विषय में भी यह व्याख्या प्रासंगिक है, क्योंकि किसी भी महिला को महिला होने के कारण मानव अधिकारों के दायरे से पृथक नहीं किया जा सकता हैं। मानवता से सम्बन्धित संकल्पना की पूर्णता महिला एवं पुरुष दोनों के प्रति हमारे सम्पूर्ण सरोकारों में निहित है। महिला एवं पुरुष के मध्य किसी भी प्रकार का विभेद मानवता के विचार को खण्डित करता है। अतः 'महिला अधिकार', 'मानवाधिकारों' से कोई पृथक् विचार नहीं है, बल्कि महिला अधिकार मानवाधिकार का सम्पूरक विचार है। महिला अधिकारों के बिना मानव अधिकारों को धारणा अधुरी है, क्योंकि मानवाधिकार का विचार मानवता से सम्बद्ध है, ना केवल पुरुष अथवा महिला से।

सम्पूर्ण मानवता के बुनियादी सरोकारों से सम्बद्ध होने के कारण महिलाएँ भी पुरुषों के समान अधिकारों की समान अधिकारिणी है। यद्यपि दीर्घकालिक संघर्ष एवं द्वन्द्व के पश्चात मानवाधिकारों की अनिवार्यता पर आम सहमति सम्भव हो सकी है, वही महिला अधिकारों की आवश्यकता, प्रकृति एवं क्रियान्विति के विविध पक्षों पर आज भी विवाद है। यद्यपि तात्विक आधार पर मानवाधिकार एवं महिला मानवाधिकार में कोई भेद नहीं है, लेकिन विकास के स्तर पर महिलाओं की उपेक्षित स्थिति ने चिन्तन के धरातल पर महिला मानवाधिकार के अध्ययन की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

मानवाधिकार अधिकार एवं मूल अधिकार से व्यापक अवधारणा है। अधिकार कुछ करने या रखने की स्वाधीनता है, जो विधि द्वारा मान्यता प्राप्त और संरक्षित है।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 7.394| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January-February 2024 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2024.1101045

मूल अधिकार ऐसे आधारभूत अधिकार हैं, जो किसी नागरिक के बौद्धिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास के लिए अनिवार्य हैं, जिसके बिना उसका विकास अवरुद्ध हो जाता है।

मानवाधिकार से आशय मानव समुदाय का सदस्य होने के नाते प्रत्येक मानव को राष्ट्रीयता, लिंग, जाति, वर्ण, सामाजिक, आर्थिक स्थिति एवं व्यवसाय आदि विभेद के बिना प्राप्त उन समस्त अधिकारों से है, जो जीवन, स्वतन्त्रता, समानता एवं गरिमा से सम्बन्धित तथा उसके व्यक्तित्व के विकास के लिए अनिवार्य होते हैं। मानव अधिकार के अन्तर्गत ऐसे समस्त पक्ष/अधिकार सम्मिलित होते हैं, जो प्रत्येक मनुष्य को मनुष्य होने के नाते प्राप्त होने चाहिए, चाहे इसके लिए उपयुक्त कानूनी व्यवस्था हो, न हो। अन्य शब्दों में मानवाधिकार से तात्पर्य संविधान द्वारा प्रत्याभूत अथवा अन्तर्राष्ट्रीय प्रसविदाओं में अन्तर्निहित उन अधिकारों से है, जो जीवन, स्वतंत्रता, समानता एवं प्रत्येक व्यक्ति की गरिमा से सम्बन्धित तथा न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय हो ।

इस आधार पर महिला मानवाधिकार से तात्पर्य महिला को मानव होने के नाते उसके जीवन, स्वतंत्रता, समानता एवं गरिमा से सम्बन्धित उन अधिकारों से है, जो उसके व्यक्तित्व के विकास के लिए आवश्यक है।

II. विकास

आधुनिक काल में मानव अधिकारों की प्राप्ति का संघर्ष इंग्लैण्ड में 13वीं शताब्दी से आरम्भ हुआ। 1215 ई. में प्रसिद्ध मैग्नाकार्टा की घोषणा से ब्रिटिश संसद को शासक पर नियंत्रण का अधिकार प्राप्त हुआ। 1688 ई. की गौरवपूर्ण क्रान्ति एवं 16 दिसम्बर, 1689 ई. की ब्रिटिश संसद द्वारा घोषित 'अधिकारों की घोषणा' को शासन द्वारा स्वीकृति मानव अधिकारों की प्राप्ति की दिशा में मील का पत्थर सिद्ध हुए। विश्व में मानव अधिकारों की व्यापक गरिमा 1789 की फ्रांसीसी क्रान्ति से स्थापित हुई। रूसो के संविदा सिद्धान्त से प्रेरित इस क्रान्ति के पश्चात् संविधान ने यह घोषणा की कि संविधान निर्मित होने पर सर्वप्रथम 'मानव अधिकारों का उल्लेख किया जाएगा। इस प्रकार मानव अधिकारों की घोषणा के आधार पर समता, स्वतन्त्रता एवं बन्धुत्व को कानूनी अधिकार की मान्यता प्राप्त हुई। 1917 ई. की रूस की साम्यवादी क्रान्ति के पश्चात् स्वीकृत नवीन रूसी संविधान में नागरिकों को वे समस्त अधिकार प्रदान किये गए, जिन्हें बाद में मानवाधिकार के रूप में परिभाषित किया गया।

मानवता के घोर विनाशक द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् सम्पूर्ण मानवता की सुरक्षा एवं कल्याण के उद्देश्य से गठित संयुक्त राष्ट्र संघ ने अपनी स्थापना के साथ ही मानव अधिकारों की अभिवृद्धि एवं संरक्षण के लिए प्रयास आरम्भ कर दिये। संयुक्त राष्ट्र चार्टर की धारा 68 के तहत 26 जून, 1945 ई. को सेनफ्रांसिस्को में सम्पन्न अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में इस प्रस्ताव का अनुमोदन किया गया कि आर्थिक व सामाजिक परिषद् मानवाधिकारों को प्रोत्साहन देने के लिए एक आयोग का गठन करें। इस प्रस्ताव के अनुरूप प्रथम बार मानवाधिकारों के संरक्षण के उद्देश्य से 1946 ई. में ऐलोनोर रूजवेल्ट की अध्यक्षता में 18 सदस्यीय मानवाधिकार आयोग का गठन किया गया। इसके पश्चात् दिसम्बर 1948 ई. को अमरीका की श्रीमती फ्रेंकलिन, डॉ. रूजवेल्ट तथा लेबनान के डॉ. चार्ल्स मलिक के संयुक्त प्रयासों से 'डिकलरेशन ऑफ ह्यूमन राइट' का प्रारूप तैयार करके संयुक्त राष्ट्र संघ को सौंपा गया, जिसे संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 10 दिसम्बर 1948 ई. को अंगीकार किया गया। मानव अधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा में 30 धाराओं को शामिल किया गया, जिनमें विश्वसमुदाय के सभी लोगों के लिए चाहे वे किसी वर्ण या जाति, वर्ग धर्म, लिंग व राष्ट्र के हों, उनके अधिकारों की सुरक्षा और उनकी सर्वोच्चता को प्राथमिकता देने की बात कही गई।

संयुक्त राष्ट्र संघ में विश्वास रखने वाले राष्ट्रों ने 'मानव अधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा' को स्वीकार करते हुए मूलभूत मानव अधिकारों और मानवीय गरिमा तथा सम्मान के प्रति आस्था व्यक्त की तथा व्यापक स्वाधीनता के वातावरण में सामाजिक प्रगति और जीवन के बेहतर मानकों को बढ़ावा देने का संकल्प व्यक्त किया। संयुक्त राष्ट्र संघ के एक सक्रिय उत्साही सदस्य होने के नाते भारत ने मानवाधिकारों को स्वीकार करते हुए अपने संविधान में इनका विधिवत समावेश किया। न्यायालय द्वारा अपने अनेक निर्णयों में संविधान की उपर्युक्त व्यवस्थाओं के अलावा 'मानवाधिकारों की विश्वजनीन घोषणा' को उद्धृत करते हुए लोकतंत्रीय भावना के साथ-साथ सामाजिक न्याय के निर्वाह को भी बढ़ावा दिया गया। भारत सरकार द्वारा मानव अधिकारों की रक्षा और इनके बारे में सजगता को बढ़ावा देने के उद्देश्य से 19 दिसम्बर 1993 ई. को 'राष्ट्रीय मानवाधिकार विधेयक पारित किया गया, जिसके माध्यम से देश में मानवाधिकार की रक्षा के लिए राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, राज्य मानवाधिकार आयोग तथा मानवाधिकार न्यायालय गठित किये गये।

मानव अधिकारों की प्रथम सार्वभौमिक घोषणा के 20 वर्षों पश्चात् संयुक्त राष्ट्र द्वारा 1968 ई. को 'अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार वर्ष' घोषित किया गया तथा 1993 ई. में वियना विश्व सम्मेलन में अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय ने पूरी दुनिया में मानव अधिकारों को बढ़ावा देने और उन्हें संरक्षण प्रदान करने के लिए कई महत्त्वपूर्ण कदम उठाये। वर्तमान समय में मानवाधिकार का दायरा व्यापक एवं प्रभावशाली सिद्ध हुआ है।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 7.394| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January-February 2024 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2024.1101045

विश्व में मानव अधिकारों के प्रति जागरूकता के विकास के साथ महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के प्रति चिंता बढ़ी है। महिला मानवाधिकार की संकल्पना कोई नवीन विचार नहीं है, अपितु इसका विकास इतिहास की दीर्घ अवधि के अन्तर्गत हुआ। इन अधिकारों का विचार अपने आरंभिक रूप में प्राचीन यूनानी दार्शनिक प्लेटो के चिंतन में प्रतिबिम्बित होता है। प्लेटो ने अपनी कृति 'रिपब्लिक' में स्त्री-पुरुष के समान अधिकारों का समर्थन करते हुए महिलाओं के शिक्षा प्राप्त करने एवं शासन में भाग लेने के अधिकार का प्रतिपादन किया। 1776 ई. में अमेरिकी स्वतंत्रता की घोषणा के समय इस बात को मान्यता दी गई कि सभी स्त्री-पुरुष जन्म से समान हैं। 1793 ई. में वॉल्स्टनक्राफ्ट ने अपनी कृति 'विडीकेशन ऑफ राइट्स' के माध्यम से कानूनी, राजनीतिक और शैक्षणिक क्षेत्रों में महिलाओं के समान अधिकार का दृढ़ता से समर्थन किया। 1869 ई. में जॉन स्टुअर्ट मिल ने अपनी कृति 'सब्जेक्शन ऑफ वीमेन' में स्त्री मताधिकार का समर्थन करते हुए सुयोग्य एवं प्रतिभाशाली स्त्रियों को समान अवसर प्रदान करने की वकालत की।

19वीं शताब्दी में मार्क्सवाद के प्रर्वतकों ने भी स्त्री-पुरुष समानता पर बल देते हुए महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार देने का समर्थन किया। इन्होंने महिलाओं को समान कार्य के लिए समान वेतन व रोजगार के अधिकार का प्रतिपादन किया। 1917 ई. की साम्यवादी क्रान्ति के बाद रूसी संविधान में महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार प्रदान किये गये।

नारी मुक्ति आन्दोलन की प्रवर्तक अमेरिकी महिला 'सराह हेल' ने अपनी पत्रिका 'लेडीज मैगजीन' के माध्यम से विश्व में महिला अधिकारों की चेतना को स्वर प्रदान किया। सराह ने महिला आन्दोलन के माध्यम से महिलाओं को पुरुषों के समान दर्जा देने तथा लड़के-लड़कियों की समान शिक्षा की माँग की। इसी प्रकार अमरिकी महिला बेट्टी फ्राइडन ने अपने संगठन 'राष्ट्रीय महिला संगठन' के माध्यम से महिला अधिकारों के सन्दर्भ में 'नारी मुक्ति' आन्दोलन का संचालन किया। 1611 ई. में संयुक्त राज्य अमेरिका ने मेसाच्युसेट्स राज्य में महिलाओं को मत देने का अधिकार प्राप्त हुआ, जिसे 1780 ई. को वापस ले लिया गया। 1788 ई. में फ्रांस के राजनीतिज्ञ कांडसेंट ने महिलाओं के लिए शिक्षा एवं नौकरी प्राप्त करने तथा राजनीति में भाग लेने के अधिकार को मांग प्रस्तुत की। 1840 ई. में संयुक्त राज्य अमेरिका में लुक्रीशिया नामक व्यक्ति ने 'ईक्वल राइट एसोसिएशन' की स्थापना करके अन्य महिलाओं की भाँति नीग्रो महिलाओं के समान अधिकारों की जोरदार माँग की थी। 8 मार्च, 1857 ई. को न्यूयार्क के सिलाई उद्योग और वस्त्र उद्योग में कार्यरत महिलाओं ने पुरुषों के समान वेतन एवं 10 घंटे के कार्य दिवस के निर्धारण हेतु हड़ताल की थी। अतः इसी दिवस को विश्व भर में अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में मनाया जाता है। 1859 ई. में सोवियत संघ के सेंट पीटर्सबर्ग प्रांत में महिला मुक्ति आन्दोलन का सूत्रपात किया गया। 1869 ई. में संयुक्त राज्य अमेरिका में महिला मताधिकार की प्राप्ति के लिए राष्ट्रीय महिला मताधिकार संगठन की स्थापना की गई। 1882 ई. में फ्रांस के प्रसिद्ध लेखक विक्टर ह्यूगो के संरक्षण में महिला अधिकार संगठन की स्थापना की गई।

1893 ई. में न्यूजीलैण्ड में पहली बार महिलाओं को मत देने का अधिकार दिया गया। 1904 ई. में संयुक्त राज्य अमेरिका में 'इन्टरनेशनल वीमेन्स राइट एलाइन्स' अन्तर्राष्ट्रीय महिला अधिकार समिति की स्थापना की गई। फिनलैण्ड में 1906 ई. में महिलाओं को प्रथम बार मत देने का अधिकार प्राप्त हुआ। ब्रिटेन में 1908 ई. में 'वीमेन्स फ्रीडम लीग' की स्थापना हुई। जापान में 1911 ई. में पहली बार महिला मुक्ति आन्दोलन का प्रारम्भ हुआ। चीन में 1912 ई. में नानकिंग में महिला मताधिकार की मांग को लेकर महिला संगठनों की बैठक हुई। नार्वे में 1913 ई. में महिलाओं को प्रथम बार मताधिकार दिया गया। वर्ष 1936 ई. में फ्रांस में महिलाओं को प्रथम बार मताधिकार दिया गया तथा नोबेल पुरस्कार से सम्मानित मैडम क्यूरी सहित तीन महिलाएँ पहली बार फ्रांस में मंत्री बनी। 1945 ई. में इटली में पहली बार महिलाओं को मताधिकार दिया गया। 1945 ई. में गठित संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर की प्रस्तावना में स्त्री-पुरुष के समान अधिकारों में आस्था को व्यक्त किया गया। संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 10 दिसम्बर, 1948 ई. को मानव अधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा में अनुच्छेद-2 के अन्तर्गत इस भावना को व्यक्त किया गया कि प्रत्येक व्यक्ति इस घोषणा में ऊपर वर्णित सभी अधिकारों तथा स्वतन्त्रताओं का जाति, वर्ण, पुरुषत्व या नारीत्व, भाषा, धर्म, राजनीति या अन्य मत, राष्ट्रीय या सामाजिक उद्गम, सम्पत्ति, जन्मों या अन्य प्रास्थिति जैसे किसी आधार पर किसी भी प्रकार के भेदभाव के बिना अधिकारी होगा।" इस प्रकार मानवाधिकारों की विश्वजनीन घोषणा में महिला-पुरुषों के समान अधिकारों को घोषित किया गया। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने 1951 ई. में महिलाओं के लिए पुरुषों के समान कार्य के लिए समान वेतन सम्बन्धी नियम पारित किया। 1952 ई. में संयुक्त राष्ट्र महासभा ने भारी बहुमत से महिलाओं के राजनीतिक अधिकारों का नियम पारित किया। ट्यूनीसिया में 1957 ई. में स्त्री-पुरुष समानता का कानून पारित किया गया। महिलाओं के अधिकारों के विरुद्ध रहने वाले इस्लामिक राष्ट्र ईरान ने 1968 ई. में महिलाओं को पुरुषों के सम्मान अधिकार देने की बात को सार्वजनिक रूप से स्वीकारते हुए महिलाओं को नौकरी का अधिकार प्रदान किया।

विश्व स्तर पर पहली बार महिलाओं की प्रस्थिति पर चिन्ता व्यक्त करते हुए 1975 ई. को अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष घोषित किया गया तथा 'कोपेनहेगन' में पहला अन्तर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन का आयोजन किया गया। 18 दिसम्बर 1979 ई. को संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा स्त्री विरोधी सभी प्रकार के भेदभावों के उन्मूलन करने सम्बन्धी संविदा को स्वीकार किया गया था। स्त्रियों के लिए समान अधिकारों के लक्ष्य की संप्राप्ति की दिशा में उठाया गया यह एक बड़ा कदम था। इस संविदा में समाविष्ट 30 अनुच्छेदों में स्त्रियों के समान अधिकारों की प्राप्ति के लिए अंतर्राष्ट्रीय रूप से स्वीकृत सिद्धान्तों और मानदण्डों को वैधानिक रूप से स्वीकृत किया गया। 1980 ई. में महिलाओं के प्रति सभी प्रकार के भेदभाव को समाप्त करने के लिए समिति के गठन का प्रस्ताव पारित किया गया। 1992 ई. में महिलाओं के प्रति हिंसा को उनके विरुद्ध भेदभाव की संज्ञा दी गई। 1993 ई. में संयुक्त राष्ट्र द्वारा महिलाओं एवं बालिकाओं के अधिकारों को मानव

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 7.394| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January-February 2024 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2024.1101045

अधिकारों के अभिन्न भाग के रूप में स्वीकार किया गया तथा महिलाओं के प्रति हिंसा को समाप्त करने के आशय से नवीन घोषणा जारी की गई। 1994 ई. में उक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए विभिन्न देशों में लैंगिक हिंसा के तथ्य संकलित करने के लिए विशेष प्रतिवेदनों की नियुक्ति की गई।

1995 ई. में महिलाओं के तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में महिला अधिकारों की प्राप्ति के लिए संघर्ष की विस्तृत रणनीति जारी की गई। इस सम्मेलन में 189 देशों के प्रतिनिधियों ने घोषणा और कार्यनीति का अनुमोदन किया, जिसका उद्देश्य सार्वजनिक एवं निजी जीवन के सभी क्षेत्रों में महिलाओं के समक्ष आने वाली बाधाओं को समाप्त करना था। 1998 ई. में अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय ने लैंगिक हिंसा को अपराध घोषित किया। वर्ष 2000 में महासभा के विशेष अधिवेशन में सदस्य देशों ने अनेक नई पहले करने का संकल्प लिया, यथा प्रत्येक प्रकार की घरेलू हिंसा के विरुद्ध कानूनी व्यवस्था मजबूत बनाना और कम आयु में जबरन विवाह आदि पर रोक लगाने के लिए सक्षम कानूनी व्यवस्था करना। लड़कों और लड़कियों दोनों के लिए मुफ्त अनिवार्य शिक्षा देने और स्वास्थ्य की देखभाल और निवारक कार्यक्रमों को प्रचारित करके महिलाओं का स्वास्थ्य सुधारने के उद्देश्य से लक्ष्य निर्धारित किए गए।

III. भारत में महिला मानवाधिकारों का विकास

भारतीय सन्दर्भ में महिला मानवाधिकार का एक दीर्घ इतिहास रहा। इसका प्रारम्भ वैदिक काल से माना जा सकता है। समाज में वर्ण एवं लिंग आधारित विभेद का अभाव था तथा समाज द्वारा महिलाओं के व्यापक अधिकारों को स्वीकृति प्राप्त थी। पुरुषों के समान महिलाओं को शिक्षा प्राप्त करने, गुरुकुल में रहकर शिक्षण प्राप्त करने, उपनयन संस्कार, ब्रह्मचर्यव्रत धारण करने, संगीत एवं युद्धकौशल की शिक्षा प्राप्त करने, शास्त्रार्थ करने, यह अनुमान करने, जीवन-साथी का चयन करने, सार्वजनिक जीवन में भाग लेने, स्वच्छन्द आवागमन, अध्यापन करने तथा उत्तराधिकार इत्यादि अधिकार प्राप्त थे। विधवा महिलाओं को पुर्नर्विवाह तथ नियोग की स्वतन्त्रता का अधिकार प्राप्त था। वैदिककालीन समाज में अधिकारों की दृष्टि से स्त्री-पुरुष में किसी भी प्रकार के विभेद का अभाव था, लेकिन उत्तर वैदिक काल में इस स्थिति में परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगा। वर्ण एवं लिंग समाज में विभेद के आधार स्वीकार किये जाने लगे। परिवार में कन्या का जन्म आपत्ति का सूचक माने जाने लगा। "सखा जया कृपण हि दुहिता ज्योतिर्द्वि पुंज परमे व्योमम" अब स्त्रियों की स्वतन्त्रता एवं समानता के अधिकारों का शनैः-शनैः लोप होने लगा और उस पर अनेक मर्यादाएँ आरोपित की जाने लगीं।

मध्यकाल की सामाजिक व्यवस्था में जब पुरुषों की अग्रणी स्थिति को औचित्य प्राप्त हो गया तो महिलाओं को अनेक अधिकारों से वंचित कर दिया गया। मुहम्मद बिन कासिम के आक्रमण से लेकर मुगल साम्राज्य के पतन तक भारतीय समाज में महिला अधिकारों पर अनेक सामाजिक बन्धन आरोपित कर उसे घर की चारदीवारी तक सीमित कर दिया गया। इस प्रकार स्वतन्त्रता एवं समानता पर आधारित महिलाओं की 'सहधर्मिणी' की भूमिका अवमिश्रित हो गई और उसे वैदिक काल में प्राप्त अनेक मानवोचित अधिकारों से भी वंचित कर दिया गया।

ब्रिटिशकाल में अधिकारों की दृष्टि से महिलाओं की स्थिति और भी दयनीय हो चुकी थी तथा महिलाओं के साथ लैंगिक आधार पर भेदभाव किया जाने लगा। महिलाओं को शिक्षा प्राप्त करने एवं सम्पत्ति में हिस्सा प्राप्त करने का अधिकार नहीं था। महिलाओं द्वारा सार्वजनिक, राजनीतिक एवं आर्थिक क्रिया करना एक अनैतिक कार्य के रूप में देखा जाता था। समाज में स्त्री का न तो अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व था और ना ही उन्हें सामाजिक अधिकार प्राप्त थे।

महिलाओं की अधिकार-विहीन दयनीय स्थिति से व्यथीत होकर अनेक समाज सुधारकों द्वारा महिला अधिकारों की प्राप्ति की दिशा में आन्दोलन का संचालन किया गया। राजा राममोहनराय से प्रारंभ होकर अनेक समाज सुधारकों द्वारा स्त्री प्रगति के क्षेत्र में योगदान महत्त्वपूर्ण रहा। कुछ प्रयास वेदकालीन समाज की पुनर्स्थापना की दिशा में किए गए तथा कुछ प्रयास उदारवाद के समानता के सिद्धान्त को प्रयोगात्मक रूप से कार्यान्वित करने के लिए किए गए। इन दोनों प्रयासों ने स्वियों की उन्नति के लिए एक बौद्धिक चेतना उत्पन्न की। राजा राममोहन राय ने महिला-विरोधी अनेक प्रथाओं, यथा- बहु-विवाह, बाल-विवाह, सती प्रथा, पर्दा-प्रथा आदि का प्रखर विरोध किया। स्वामी विवेकानन्द, महादेव गोविन्द रानाडे, महर्षि कर्वे, स्वामी दयानन्द सरस्वती, ईश्वरचंद विद्यासागर, बेहरामजी मालाबारी, जी.के. देवधर, पं. रमाबाई, ज्योतिराव फुले, एनीबेसेंट, महात्मा गाँधी आदि महापुरुषों का महिला उत्थान की दिशा में विशेष योगदान रहा। इन समाज सुधारकों के प्रयासों का यह परिणाम रहा कि महिलाओं में अपने अधिकारों के प्रति चेतना का जागरण हुआ तथा उन्होंने अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए चलाए जा रहे आन्दोलनों को स्वर प्रदान किया।

व्यापक स्तर पर अपने अधिकारों के लिए महिलाओं के संघर्ष का प्रारम्भ स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान ही हो गया था। 1917 ई. से प्रारम्भ यह संघर्ष 1947 ई. तक चला। 1917 ई. में भारतीय महिलाओं ने संगठित रूप से अपने अधिकारों की सार्वजनिक मांग प्रस्तुत की। मार्गरिट कोसिन के नेतृत्व में महिला प्रतिनिधि मण्डल ने तत्कालीन भारतीय सचिव एवं गवर्नर (लार्ड चेम्सफोर्ड) के समक्ष महिला मताधिकार की माँग प्रस्तुत की। महिलाओं के प्रयासों के फलस्वरूप 1920 ई. में पहली बार मद्रास विधान परिषद द्वारा महिलाओं को

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 7.394| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January-February 2024 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2024.1101045

मताधिकार प्रदान किया गया। अपने अधिकारों की प्राप्ति की दिशा में किये जा रहे संघर्ष में महिलाओं की यह प्रथम बड़ी विजय थी। 1929 ई. तक समस्त विधान परिषदों द्वारा महिलाओं को मत देने का अधिकार दे दिया गया। यद्यपि यह मताधिकार सीमित था ।

स्वतंत्रता के उपरांत अंगीकृत भारतीय संविधान में स्त्री-पुरुष समानता को वैधानिक रूप में स्वीकार किया गया है। महिला अधिकारों की दृष्टि से संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 21, 39 (ए), (डी), (ई), 42, 44, 51 (क) विशेष उल्लेखनीय हैं। महिलाओं के हितों के संरक्षण एवं अधिकारों में अभिवृद्धि की दिशा में राज्य द्वारा अनेक अधिनियम एवं कानून बनाए गए। खान अधिनियम 1952, बीड़ी एवं सिगार कर्मकार अधिनियम, 1966, प्रसूति प्रसुविधा अधिनियम 1961, ठेका श्रम अधिनियम 1970, समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976, बाल विवाह निषेध अधिनियम 1976, स्त्री अशिष्ट निरूपण निषेध अधिनियम 1986, सती निषेध (संशोधित) अधिनियम 1987, प्रसव पूर्व निदान तकनीक अधिनियम इत्यादि महिलाओं के अधिकारों का पोषण करने वाले विशेष अधिनियम है।

भारत सरकार द्वारा 1953 ई. में श्रीमती दुर्गाबाई देशमुख की अध्यक्षता में केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड की स्थापना की गई। 1971 ई. में महिलाओं की स्थिति की जाँच के लिए एक समिति नियुक्त की गई। समिति की रिपोर्ट को 'टुवर्ईस इक्वैलिटी' के नाम से प्रकाशित किया गया। रिपोर्ट की सिफारिशों के आधार पर छठी पंचवर्षीय योजना में महिलाओं के विकास सम्बन्धी अनेक कार्यक्रम प्रारम्भ किये गए। 1985 ई. में मानव संसाधन विकास मंत्रालय के एक भाग के रूप में महिला एवं बाल विकास विभाग का गठन किया गया। यह विभाग एक केन्द्रीय अभिकरण के रूप में महिला विकास से सम्बन्धित योजनाओं, नीतियों एवं कार्यक्रमों का निर्माण करता है। महिला विकास के ठोस नीतिगत प्रयास के रूप में राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम 1990 ई. के अनुसार एक सांविधिक निकाय के रूप में 1992 ई. में राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन किया गया। महिलाओं के समान अधिकारों के प्रति संकल्प को व्यक्त करते हुए 30 मार्च, 1993 ई. में एक पंजीकृत संस्था के रूप में राष्ट्रीय महिला कोष का गठन किया गया। 1993 ई. को राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का गठन किया गया। वर्ष 2000 के पश्चात भारत एवं अंतरराष्ट्रीय समुदाय ने महिलाओं के मानवाधिकारों की सुरक्षा एवं प्रोत्साहन हेतु अनेक प्रभावी कदम उठाए। इन प्रयासों का मुख्य उद्देश्य महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव, हिंसा, शोषण और सामाजिक असमानता को समाप्त कर लैंगिक समानता सुनिश्चित करना रहा। वैश्विक स्तर पर CEDAW (Convention on the Elimination of All Forms of Discrimination Against Women) तथा बीजिंग एक्शन प्लेटफार्म के सिद्धांतों को मजबूत करते हुए महिलाओं के अधिकारों के संवर्धन के लिए विभिन्न नीतियों, कानूनों और कार्यक्रमों को क्रियान्वित किया गया। भारत में भी संविधान द्वारा प्रदत्त समानता, न्याय और स्वतंत्रता के अधिकारों को वास्तविक रूप देने के लिए व्यापक सुधार किए गए।

भारत सरकार ने 2001 में राष्ट्रीय जनसंख्या नीति और 2002 में राष्ट्रीय युवा नीति के माध्यम से महिला स्वास्थ्य, शिक्षा और भागीदारी पर विशेष ध्यान केंद्रित किया। 2005 में घरेलू हिंसा से महिलाएँ संरक्षण अधिनियम लागू किया गया, जिसने महिलाओं को घरेलू दुर्व्यवहार से कानूनी संरक्षण प्रदान किया। 2006 में बाल विवाह निषेध अधिनियम में संशोधन कर दंडात्मक प्रावधानों को सख्त किया गया। 2008 में भारत ने राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण नीति घोषित की, जिसका लक्ष्य महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक रूप से सशक्त बनाना था। कार्यस्थल पर सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए 2013 में यौन उत्पीड़न निषेध अधिनियम (POSH Act) पारित किया गया, जिसने सभी संस्थानों में महिला सुरक्षा के लिए अनिवार्य दिशानिर्देश लागू किए।

वर्ष 2012 के निर्भया कांड के बाद महिला सुरक्षा के क्षेत्र में व्यापक सुधार किए गए। 2013 में आपकी सुरक्षा—हमारा संकल्प के तहत पुलिस सुधार, फास्ट-ट्रैक कोर्ट, हेल्पलाइन 1091 और निर्भया फंड की स्थापना जैसे कदम उठाए गए। 2015 में बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ अभियान शुरू किया गया, जिसके माध्यम से बालिका भ्रूण हत्या रोकने, शिक्षा बढ़ाने एवं सामाजिक मानसिकता में सुधार पर बल दिया गया। 2018 में बलात्कार कानून में संशोधन किया गया, जिसके तहत 12 वर्ष से कम आयु की बच्चियों से बलात्कार करने वाले अपराधियों को मृत्युदंड तक की सजा का प्रावधान किया गया। महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता के लिए जनधन योजना, मुद्रा लोन, Ujjwala योजना तथा स्वयं सहायता समूहों को प्रोत्साहित करने की दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास किए गए।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर UN Women की स्थापना (2010), Sustainable Development Goals (SDGs) में लैंगिक समानता को प्रमुख लक्ष्य (Goal 5) बनाए जाने, तथा डिजिटल व मानवाधिकारों के क्षेत्र में CEDAW के विस्तारित दिशानिर्देशों ने महिलाओं के सशक्तिकरण को और अधिक मजबूती प्रदान की। शिक्षा, स्वास्थ्य, राजनीति एवं रोजगार में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने हेतु कई राष्ट्रों ने कानूनों एवं नीतियों में सुधार लागू किए।

इन सभी सुधारों के बावजूद आज भी महिलाओं के सामने लैंगिक भेदभाव, साइबर अपराध, मानव तस्करी, घरेलू हिंसा, दहेज संबंधी अपराध, स्वास्थ्य असमानता एवं सुरक्षा संबंधी चुनौतियाँ बनी हुई हैं। अतः यह आवश्यक है कि कानूनी उपायों के साथ समाज में चेतना और व्यवहारिक दृष्टिकोण में पर्याप्त परिवर्तन आए। शिक्षा, आर्थिक सशक्तिकरण और समान अवसरों के विस्तार के बिना महिलाओं के मानवाधिकारों की पूर्ण सुनिश्चितता संभव नहीं है।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 7.394| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January-February 2024 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2024.1101045

IV. निष्कर्ष

स्वतंत्रता के कई दशकों के बाद भी महिलाओं की दशा एवं स्थिति में अपेक्षित परिवर्तन नहीं आया है। यद्यपि स्वाधीनता के उपरान्त भारतीय संविधान में महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार एवं दर्जा प्रदान किया गया था, लेकिन यह संवैधानिक व्यवस्था महज औपचारिकता रही। अधिकार एवं सामाजिक स्थिति के संदर्भ में आज भी महिलाएँ पुरुषों से पिछड़ी हुई हैं। विपरीत लिंगानुपात, शिक्षा एवं स्वास्थ्य का निम्न स्तर अधिकारों के संदर्भ में महिलाओं की दयनीय स्थिति के स्पष्ट द्योतक है। भारतीय संविधान द्वारा स्त्री-पुरुष की समानता को संवैधानिक स्वीकृति के पश्चात् भी भारतीय समाज की संरचना में इसे पूर्ण स्वीकृति प्राप्त ना होना अर्थात् सामाजिक संरचना में स्त्री-पुरुष के मध्य यह असमानता ही महिलाओं की दयनीय स्थिति के लिए उत्तरायी है। चूंकि लिंग-विभेद समाज द्वारा सृजित एवं पोषित स्थितियाँ हैं, अतः सामाजिक परिवर्तन द्वारा ही इस स्थिति में परिवर्तन सम्भव है। सामाजिक परिवर्तन में राज्य की प्रभावी भूमिका के साथ समाज का योगदान अपेक्षित है। संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों को समाज की व्यापक स्वीकृति ही महिला मानवाधिकार की दिशा में सशक्त कदम सिद्ध होगा।

महिला मानवाधिकार केवल कानूनी अधिकार नहीं, बल्कि मानवतावादी चिंतन पर आधारित वह मूल्य व्यवस्था है, जिसमें प्रत्येक महिला को अपने अस्तित्व, स्वतंत्रता, सम्मान और समानता के साथ जीवन जीने का अधिकार प्राप्त होता है। इतिहास साक्षी है कि महिलाओं को लंबे समय तक सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में भेदभाव, शोषण एवं असमानता का सामना करना पड़ा। ऐसे में मानवतावादी दृष्टिकोण से महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करना सामाजिक न्याय, नैतिकता एवं मानवीय गरिमा की स्थापना के लिए अनिवार्य हो जाता है।

शोध में यह पाया गया कि भारतीय संविधान ने प्रारंभ से ही महिला अधिकारों को मानवीय मूल्य के रूप में संरक्षित किया है। संविधान के प्रस्तावना में स्वतंत्रता, समानता और सामाजिक न्याय की अवधारणा महिलाओं के मानवाधिकारों के संरक्षण के मूल आधार रहे हैं। अनुच्छेद 14, 15, 16 एवं 21 महिलाओं को समानता, स्वतंत्रता और जीवन के अधिकार की गारंटी प्रदान करते हैं। साथ ही राज्य के नीति निर्देशक तत्वों और अनेक विधिक प्रावधानों ने महिलाओं के अधिकारों को सुदृढ़ किया। यह मानवतावादी संवेदनशीलता का ही परिणाम है कि भारत में महिला अधिकारों के संरक्षण हेतु समय-समय पर कानूनी सुधार किए गए और सामाजिक परिवर्तन की दिशा में प्रयास निरंतर जारी हैं।
महिलाओं के मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ी है, शिक्षा एवं आर्थिक क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि हुई है, डिजिटल स्पेस में उनकी उपस्थिति मजबूत हुई है तथा स्थानीय से राष्ट्रीय स्तर तक नेतृत्व में महिलाओं की भूमिका विस्तारित हुई है। घरेलू हिंसा, कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न, दहेज हत्या, मानव तस्करी आदि अपराधों के विरुद्ध कठोर कानूनों का निर्माण हुआ है, जिससे महिलाओं की सुरक्षा व न्याय की गारंटी मजबूत हुई है।

किन्तु दिशाहीन चुनौतियाँ अभी भी शेष हैं। समाज में व्याप्त लैंगिक असमानता, पितृसत्तात्मक मानसिकता, साइबर अपराध, वेतन अंतर, निर्णय-निर्माण में सीमित भागीदारी तथा ग्रामीण—शहरी विषमता अभी भी महिलाओं को पूर्ण अधिकारों से वंचित करती है। यह दर्शाता है कि केवल विधिक उपाय पर्याप्त नहीं, बल्कि व्यापक सामाजिक परिवर्तन आवश्यक है। मानवतावादी चिंतन तभी सार्थक होगा जब महिलाओं को वास्तविक संवैधानिक अधिकारों के साथ व्यवहारिक जीवन में सम्मान, स्वायत्तता और स्वतंत्र निर्णय लेने का अवसर प्राप्त होगा।

महिला मानवाधिकारों की दिशा में निरंतर सुधारों, नीतियों एवं जागरूकता की आवश्यकता बनी हुई है। शिक्षा और आर्थिक सशक्तिकरण महिलाओं की मुक्ति का प्रमुख साधन है, इसलिए इनके विस्तार को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। समाज में समानता का वातावरण तभी निर्मित होगा जब प्रत्येक नागरिक लैंगिक समानता के सिद्धांत को हृदय से स्वीकार करेगा। अतः महिला मानवाधिकारों की पूर्णता के लिए सरकार, न्यायपालिका, मीडिया, नागरिक समाज और स्वयं महिलाओं की सक्रिय भागीदारी आवश्यक है।

अंततः कहा जा सकता है कि मानवतावादी चिंतन पर आधारित महिला मानवाधिकार एक आदर्श की संकल्पना भर नहीं, बल्कि एक ऐसी दिशा है जो समाज को अधिक संवेदनशील, समतामूलक और न्यायपूर्ण बनाने का मार्ग प्रस्तुत करती है। महिला का सम्मान ही समाज के मानवीय मूल्यों की असली पहचान है और जब तक महिलाएँ बिना किसी भय और भेदभाव के अपने अधिकारों का उपयोग नहीं कर पाएंगी, तब तक मानवतावादी सामाजिक व्यवस्था पूर्ण नहीं कही जा सकती। इसलिए मानवता की वास्तविक स्थापना महिला अधिकारों की पूर्ण सुरक्षा और सम्मान पर ही निर्भर करती है।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 7.394| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January-February 2024 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2024.1101045

सन्दर्भ सूची

1. अंसारी, एम. ए. (2000). महिला और मानवाधिकार. ज्योति प्रकाशन, जयपुर।
2. आरजू, एम. एच. (1993). भारतीय महिला और आधुनिकीकरण. कॉमनवेल्थ पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
3. आहूजा, राम (1992). राइट्स ऑफ वीमेन : ए फेमिनिस्ट पर्सपेक्टिव. रावत प्रकाशन, जयपुर।
4. डांडिया, सी. के. (1975). वूमेन इन राजस्थान (सम्पा.). राजस्थान विश्वविद्यालय प्रेस, जयपुर।
5. इन्द्रदेव (1969). भारतीय समाज. विश्वविद्यालय प्रकाशन, आगरा।
6. इन्दू, एम. एम. (1995). प्राचीन भारत में स्त्रियों की स्थिति. मोतीलाल पब्लिशर्स, वाराणसी।
7. किशोर, राज (1999). स्त्री के लिए जगह. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. लूनिया, उषा (2000). महिला एवं कानून. राजस्थान पत्रिका प्रकाशन, जयपुर।
9. नाटाणी, पी. एन. (2000). भारत में सामाजिक समस्याएँ. पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर।
10. पाटनी, सुशीला (1994). वीमेन पॉलिटिकल एलीट : सर्च फॉर आइडेंटिटी. प्रिन्टवैल, जयपुर।
11. रत्तू, कृष्ण कुमार (1998). भारतीय समाज : चिंतन और पतन. पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर।
12. सक्सेना, के. एस. (1999). वीमेन्स पॉलिटिकल पार्टिसिपेशन इन इंडिया. सबलाइम, जयपुर।
13. शर्मा, रामनाथ (2000). भारतीय समाज : संस्थाएँ और संस्कृति. अटलांटिक पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
14. शर्मा, वीरेंद्र प्रकाश (1999). भारत में सामाजिक परिवर्तन. पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
15. श्रीवास्तव, सुधारानी (1999). महिलाओं के प्रति अपराध. कॉमनवेल्थ पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
16. सिंह, गुरबक्श (2000). कमेन्ट्री ऑन मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम 1993. डोमिनियन लॉ डिपो, जयपुर।
17. श्रीवास्तव, सुधारानी (1999). भारत में महिलाओं की वैधानिक स्थिति. कॉमनवेल्थ पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
18. तिवारी, आर. पी. (1999). भारतीय नारी : वर्तमान समस्याएँ और समाधान. ए. पी. एच., नई दिल्ली।
19. उपाध्याय, रमेश (1996). हमारे सामाजिक और सांस्कृतिक सरोकार. राधा पब्लिकेशन्स, दिल्ली।
20. पांडे, नीलम (2005). महिला सशक्तिकरण और मानवाधिकार. श्रुति पब्लिशर्स, दिल्ली।
21. जैन, माया (2010). आधुनिक भारतीय नारी की चुनौतियाँ. भारत पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
22. सिंह, सुनीता (2014). भारत में महिला अधिकार और न्यायपालिका की भूमिका. राज प्रकाशन, जयपुर।
23. चौहान, कविता (2018). लैंगिक समानता और संवैधानिक अधिकार. ज्ञान गंगा, गाजियाबाद।

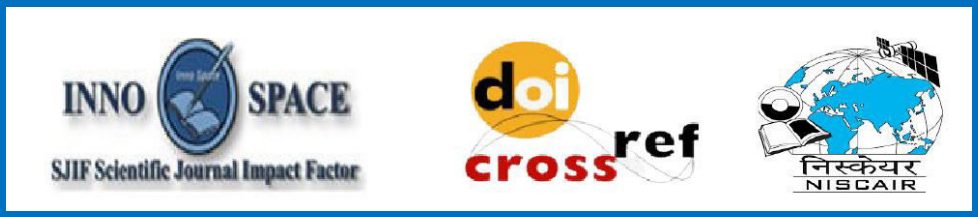

IJARETY

INNO SPACE
SJIF Scientific Journal Impact Factor

doi crossref

निस्केयर
NISCAIR

International Journal of Advanced Research in Education and TechnologY (IJARETY)

www.ijarety.in editor.ijarety@gmail.com